"लोक नाट्य परम्परा सांग"

हरप्रीत कौर

यह हरियाणा प्रदेश के लोक रंगमंच का अंश है। भारतीय शैली में रंगमंच का महत्वपूर्ण स्थान है तथा भारतीय नाटककार आधुनिक रंगमंच के लिए इसका प्रयोग कर रहे हैं। सांग या स्वांग हरियाणा का कौमी नाट्य कहा जा सकता है। स्वांग का सामान्य अर्थ किसी भी वेश–भूषा या भाषा आदि का अनुकरण करना है। स्वांग शब्द को ही लोक भाषा में सांग कहा गया। सांग की पूर्ण जानकारी के अभाव में हरियाणा का सांस्कृतिक अध्ययन अधूरा रह जाता है।

पं. राजा राम शास्त्री के अनुसार "अन्य प्रान्तों के समान हरियाणा में भी सामूहिक मनोरंजन के प्रायः दो ही साधन थे मुजरा और नकल। सम्पन्न परिवारों में विवाहादि के अवसर पर मुजरा करवाना उस व्यक्ति की सम्पन्नता एवं प्रतिष्ठा का प्रतीक था। जनसाधारण में नक्कालों से उसी प्रतिष्ठा की प्राप्ति कर ली जाती थी।" हिन्दी साहित्य में प्रचलित संगीतक शब्द भी सम्भवतः सांग परम्परा से ही सम्बद्ध है। श्री वामन आप्टे के अनुसार संगीतक का अर्थ संगीत गोष्ठी सुर–ताल से युक्त गान या सार्वजनिक उत्सव जिसमें नाच–गान हो माना गया है।

नौटकी सांग का ही पर्याय है जो पश्चात्वर्ती समय में सांग के ही एक स्वतंत्र प्रकार के रूप में प्रचलित हो गया। नौटकी में केवल प्रेम गाथाओं से युक्त श्रृंगारिक प्रसंगों को ही महत्व दिया गया जबकि सांग में ऐतिहासिक वीर गाथाओं, सामाजिक प्रसंगों एवं श्रृंगारिक प्रसंगों आदि सभी प्रकार की गाथाओं को लोक नाट्य के रूप में प्रदर्शित करने की चेष्टा की गयी। सांग में किसी विशिष्ट कथा में निहित पात्रों को उसी रूप में दर्शाने की चेष्टा करते हुए अभिनय, वाद–सम्वाद एवं गीत वाद्य और नृत्य का आश्रय लेकर नृत्य नाटिका के रूप सम्पन्न किया जाता है। यह वाद–सम्वाद पर आधारित है न कि अंग संचालन पर।

हरियाणा में सांग की परंम्परा को लगभग 250 साल पुराना मानकर किशनलाल भाट (1730 से पूर्व) को सांग का प्रथम प्रणेता माना जाता है। तत्पश्चात् दीपचन्द, हरदेवा, लख्मीचंद तथा मांगेराम आदि प्रमुख सांगी हुए हैं।

पं. राजा राम शास्त्री ने ने हरियाणा लोक मंच का काल–विभाजन निम्न प्रकार किया हैं।

क) किशनलाल भाट से पूर्वकालीन युग (सन् 1730 ई.पू.)

ख) किशनलाल भाट से युग (सन् 1730–1900.)

ग) दीपचंद युग (सन् 1900–1920)

घ) हरदेवा युग (सन् 1902–1923)

ड) लख्मी चंद युग (सन् 1923–1944)

च) मांगे राम युग (सन् 1944–1970)

छ) आधुनिक युग (सन् 1950 से आगे)

लख्मीचंद के युग में सांग परम्परा अपनी चरम सीमा पर थी। पं. लखमीचन्द को हरियाणा के सूर्य कवि नाम से सम्बोधित किया गया है। लख्मचन्द ने इक्कीस सांग लिखे हैं जो निम्न हैं। "नौटकी पद्मावत, हीर रांझा, चन्द्रकिरण, शकुन्तला, ज्यानी चोर, राजा भोज, रघबीर, जमाल, गोपीचन्द अथवा गोपीचन्द्र भरथरी, हरिशचन्द्र, द्रोपदी चीरहरण, कीचक विराट पर्व, सत्यवान–सावित्री, नलदमयन्ती, सेठ तारा दत्त, चाप सिंह, शाही लकड़हारा, भूपपुरजनं, पूरणमल, मीरा बाई।

लोक नाट्यों की भाषा क्षेत्रीय होती है। पात्रानूकूलता के लिए अन्य भाषाओं का कभी–कभी समावेश कर लिया जाता है। इसकी भाषा काव्यमयी होती है। यहाँ तक की इनके गद्यों में भी एक प्रकार की लय होती है। गद्य का प्रयोग समसामयिक विषयों के हास्य प्रधान अभिनय में किया जाता है।

साँगों में दोहा, चौपाई, काफिया, सर्वया, चौबोला (चमोला), मरहरी, सोहनी, देवंग, सारंग, अर्धलजवन्ती, कालेगड़ी, जोगिया, शेरा, गजल असवारी एवं रागिनी आदि छंदों का प्रयोग होता है।

सांग में नृत्य अभिनय का प्रमुख माध्यम होता है। सांग में एक मखौलिया (नक्काल) होता है जो हास्यपद अभिनय करके लोगों का मनोरंजन करता है।

सांग परम्परा के विभिन्न पक्ष इस प्रकार है :–

1) मंच 2) गूगा धमोड़ा 3) मशालची 4) कथानक 5) पात्र

6) कथोपकथन 7) नृत्य 8) साज और साजिंदे 9) छंद

1) **मंच :–** सांग का मंच आडम्बरहीन व सीधा–सादा खुले स्थान पर होता है। मंच पर किसी पर्दे की व्यवस्था नहीं होती। कुछ अभिनेता कभी मंच के एक ओर आकर गाने लगते हैं कभी मंच पर बीच में आकर अपना अभिनय का कार्य सम्पन्न करते हैं।

2) **गूगा धमोड़ा :–** सांग के आरम्भ होने से पूर्व गूगा धमोड़ा नाचने की परम्परा आरम्भ में थीं। कागज़ और बांस की खपचियों से बने रंग बिरंगें घोड़े के बीच खड़ा होकर इस प्रकार नृत्य करता है जैसे कोई सवार घोड़े पर सवारी कर रहा हो और घोड़ा नृत्य कर रहा हो। अब यह परम्परा लुप्त हो चुकी हैं।

3) **मशालची :–** सांग के आरम्भिक काल में प्रकाश का उचित प्रबंध न होने के कारण मशालों से काम लिया जाता था। आज मशालची की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती।

4) **कथानक :–** सांग के कथानक के लिए कोई विशिष्ट नियम नहीं है। कथानक ऐतिहासिक अथवा पौराणिक अमरसिंह राठौर, राजा हरिशचंद्र,कृष्ण सुदामा की कथा से सम्बन्धित हो सकता है। अथवा लोक कलाओं के अन्तर्गत सरणदे, कंवर निहालदे आदि से सम्बन्धित हो सकता है।

भक्ति परद कथानकों के अन्तर्गत मीरा बाई, ध्रुव भक्त, भक्त प्रलाहद सत्यवान–सावित्री, गूगा पीर की कथाएँ भी ली जाती हैं। सांग के लिए कथानक का कोई नियम नहीं है। केवल उसके लिए नाटकीय तत्व होना चाहिए।

5) **पात्र :–** पूरे कथानक को प्रदर्शित करने के लिए चार या पाँच पात्र ही होते है। दो पात्र स्त्री–वेशधारी और दो–तीन पुरूष–वेशधारी पात्र होते है।

6) **कथोपकथन :–** सांग में वार्ता और संगीतात्मक कथोपकथन प्रायः दो मुख्य अंग होते है। वार्ता प्रायः गद्य में होती है। जबकि संगीतात्मक कथोपकथन पद्य के रूप में किया जाता है।

7) **नृत्य :–** इसमें स्त्रियाँ भाग नहीं लेती। स्त्री वेशधारी पात्रों द्वारा मंच पर नृत्य किया जाता है लेकिन यह नृत्य केवल कथानक को स्पष्ट करने या

उसे रंजकता प्रदान करने के लिए ही किया जाता है। मंच के चारों ओर दर्शकों के बैठनें की व्यवस्था होने के कारण मंच पर चारों ओर घूम–घूम कर अभिनय करना होता है।

8) **साज और साजिन्दे :–** सांग में अधिकतर सांरगी और ढ़ोलक का प्रयोग किया जाता हैं। कभी–कभी नगाड़ा, ढ़फली और खंजरी का प्रयोग भी कर लिया जाता है।

9) **छन्द :–** सांग का छंद गीति छंद है। यह छंद साहित्य के छंद शास्त्र में से समन्वित छंदों से भिन्न है। किसी समय छंद में चौबोला प्रधान था, बाद में काफिया प्रधान छंद हुआ और उसके बाद रागनी को स्थान मिला।

रागिनी का शाब्दिक अर्थ है सांग में गाया जाने वाला चार–छः कड़ी (कली) का गाना रागनी की शब्द योजना सुन्दर, कल्पना इतनी मार्मिक, काव्य प्रवाह ऐसा होता है कि मुहँ से वाह निकल पड़ती हैं।लखमीचन्द ने बहुत से रागनियाँ रची थीं।

सांग नौटकी की श्रृंगारिक रागनी इस प्रकार हैं–

आया था मैं ठहरण खातर

माणस मारणी बैरन खातर

नौटंकी के पहरण खातर

हार बणया बड़े जोर का।

सांगी अपना अभिनय रागिनी के माध्यम से करता है और बीच–बीच में टेक की वृत्ति करता हैं।

प्राचीन समय में जब भी किसी सार्वजनिक काम के लिए धन एकत्रित करना होता था। जैसे– स्कूल बनवाना, तलाब बनवाना इत्यादि के लिए। तब सांग मण्डली को बुलाया जाता था। इससे गाँव के लोगों को सरकार पर निर्भर नहीं रहना पड़ता था।

सारांश :– हरियाणवी संगीत में सांग का का अनूठा स्थान हैं। सांगी का कार्य जन–मनोरंजन होता था। वह लोगों को खूब हँसाता था। सांग में सभी तरह की कथाओं की प्रदानता थी। इसलिए यह हरियाणा की संस्कृति एवं कला का दर्पण हैं।